ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 340-343
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

रीतिबद्ध

डॉ0 आभा श्रीवास्तव

असिस्टेंट प्रोफेसर– हिन्दी विभाग, श्री सुदृष्टि बाबा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सुदिष्टपुरी– रानीगंज, बलिया (उ0प्र0), भारत

Received-20.12.2023, Revised-24.12.2023, Accepted-30.12.2023 E-mail: uditasrivastava11@gmail.com

सारांशः ***रीति की सारी सामग्री रीति रीतिग्रंथकारों की काव्य की सामग्री थी शास्त्र सामग्री नहीं। श्रृंगारिक रचना रीतिबद्ध थी– लक्ष्णकार लक्ष्य से तिल भर भी हट नहीं सकता। यदि वह रति भर हटा तो लक्षण बेमेल हो जाता है। ग्रंथों में ऐसी बेमेल रचनायें कभी कभी मिल ही जाती हैं। इसका कारण यही होता है कि कवि की वह लक्षणानुगामिनी मर्मित न होकर पहले से स्वीकृत उक्ति होती है, जिसे वह बरबस वहीं खोसना चाहता है। रीति से केवल प्रेरणा लेने वाले की कविता में ऐसा नहीं होगा। रीति उसके ध्यान में रहे, रहा करे, पर उक्ति बांधने में उसे एकदम बध ही न जाना पड़ेगा।***

जरा भी लीक से इधर उधर नहीं हटते उसी में मलते–पचते रहते उसका एक कारण यह भी था कि रीतिकालीन कवि दरबारीकर्ता थे और अपने आश्रय दशाओं को खुश करने के लिए काव्य रचते। अतः निःसंकोच कहा जा सकता है कि रीतिबद्ध रचना में ह्रदय पक्ष दब सा गया था, कला पक्ष उभर आया था। मस्तिष्क के पूरे त्याग के साथ उनका रीतिबद्ध काव्य अखाड़े में उतर आया था। जंग के कवि काव्य के बहिरंग में ही रहे उसके अंतरंग में उससे प्रवेश पा सके।

कुंजीभूत शब्द– रीतिग्रंथकारों, काव्य, श्रृंगारिक रचना, लक्ष्णकार लक्ष्य, लक्षणानुगामिनी, स्वीकृत, कविता, रीतिकालीन कवि।

मध्ययुगीन रचनायें समय के अनुकूल परिस्थितिवश और अपने साहित्य को मान रक्षा के विचार से भी थी, उनका मुक्तक काल प्रधान संगीत प्रमुख होना अनिवार्य था। उन्होंने जो अनेक प्रकार की उद्भवनार्थ की है, उसके लिए वे समय की गति के कारण मजबूर थे। जानबूझकर काव्य का स्वरूप उन्होंने विकृत नहीं किया है। रही घोर श्रृंगारिकता की बात तो सो विपरीत रति और सूरतांत के वर्णन संस्कृत और प्राकृत की परम्परा में पहले से ही होती चली आ रही थी। फिर भी ऐसे वर्णनों को नाम पर जितनी अधिक कुत्सा की जाती है उतने अधिक परिणाम में वे मिलते नहीं वास्तविकता तो यह कि यह तो निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि रीतिबद्ध काव्य दरबारी वृति पाने तथा अपने आश्रयदाताओं के मनोरंजन के लिए ही घोर से घोर श्रृंगारिक रचनार्थ की जाती थी पर यह नही कहा जा सकता कि वृत्ति के लिए सचमुच बिक गया थ बल्कि सच्चाई जगप्रसिद्ध है कि विहार अपने रचना के ताकत से ही जयपुर नरेश को घोर श्रृंगार के भंवर से निकाला था।

अतः जिन कवियों ने युग के अनुरूप काव्य का निर्माण किया इसमें कृष्णबिहारी, चिंतामणि, देव, केशव और पदमाकर आदि ही प्रमुख हैं। चिंतामणि चार भाई थे। चिंतामणि, भूषण, मतिराम और जटाशंकर, जिसमें चिंतामणि से रीतिकाल का आरम्भ माना जाता है। रीतिबद्ध उनकी रचनाओं में प्रमुख है। काव्य विवेक, छंद विचार कविकल्पद्रुम, काव्य प्रकाश आदि उत्कृष्ट रचना है। भूषण की रचनाओं में वीररस का ग्रंथ शिवराज भूषण मुख्य हैं। मतिराम की गणना रीतिकाल के कवियों की चोटी के रूप में की जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनके विषय में कहा है– भावव्यंजक व्यापारे की श्रृंखला सीधी और सरल है, बिहारी के समान चक्करदार नहीं वचन वक्रता भी इन्हें बहुत पसंद न थी। रीतिकाल के कवि थे व्यक्तित्व जिनको, प्रायः साहित्यिक अभिरूचि पैतृक परम्परा के रूप में प्राप्त थी। काव्य का परिशीलन और सृजन इनका शगल नहीं था स्थायी कर्तव्य कर्म था। ये लोग निम्न वर्ग के ही सामाजिक होते थे, तथापि अपनी काव्यकला के द्वारा ऐसे राजाओं अथवा रईसों का आश्रय खोज लेते थे। जिनकी सहायता से इनकी काव्य साधना निर्विघ्न चलती रहे। अतएव इनका सम्पूर्ण गौरव इनकी काव्य कला पर ही निर्भर रहता था। इसी कारण कविता इनके लिए मूलतः एक ललितकला थी जिसके बल पर ये अपनी प्रतिभा और कला के प्रदर्शन के प्रति ये जागरूक थे इनका निषेध तो नहीं किया जा सकता परन्तु इसके आगे बढ़कर काव्य व्यवसायी या फर्मायाशी कवि कहना अन्याय होगा। सारांश यह है कि रीतिकाव्य में आत्मा कांपती हुई आवाज आपको नहीं मिलेगी। वह अपने प्रतिनिधि रूप में व्यैक्तिक गीत कविता नहीं है। वह कलात्मक कविता है स्वभावतः उसमें वस्तुतत्व असंदिग्ध है। इसलिए उसकी मूल प्रेरणा सीधे आत्माभिव्यंजना की प्रवृत्ति में न खोजकर आत्म–प्रदर्शन की प्रवृत्ति में खोजनी चाहिए।

केशव काव्य में अलंकारों का स्थान प्रधान समझने वाले चमलाखादी कवि थे उनकी इस मनोवृत्ति के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक विचत्र संयोग घटित हुआ। संस्कृत साहित्य शास्त्र के विकास क्रम की एक संक्षिप्त उद्धरणी हो गयी। साहित्य की भी मंशा क्रमशः बढ़ते–बढ़ते जिस स्थिति पर पहुँच गयी थी उस स्थिति से सामग्री न लेकर केशव ने उसके पूर्व से सामग्री ली। उन्होनं हिन्दी पाठकों का काव्यानिरूपण की उस पूर्वदंश का परिचय कराया जो यह और उद्भट के समय में भी थी उस उत्तर दशा का नहीं जो आनन्दवर्धन मम्मट और विश्वनाथ द्वारा विकसित हुई। मामह और उद्भट के समय में अलंकार और अलंकार्य का भेद स्पष्ट नहीं हुआ था, रस, रीति, अलंकार आदि सबके लिए अलंकार शब्द का व्यवहार होता था। यही बात हम केशव की कविप्रिया में भी पाते हैं। उसमें अलंकार के सामान्य और विशेष दो भेद करके सामान्य के अन्तर्गत वर्ण्य विषय और विशेष के अन्तर्गत वास्तविक अलंकार रखे गये हैं।

रीतिग्रंथों के कर्ता भावुक सहृदय और निपुण कवि थे। उनका उद्देश्य कविता करना था न कि काव्यांगों का शास्त्रीय पद्धति पर निरूपण करना। अतः उनके द्वारा बड़ा भारी कार्य यह हुआ कि रसो विशेषतः श्रृंगार (रस) और अलंकारों के बहुत ही रस और ह्रदयग्राही उदाहरण अत्यंत प्रचुर प्रमाण में प्रस्तुत हुये। ऐसे सरस और मनमोहक उदाहरण संस्कृत के सारे लक्षणग्रंथा से चुनकर इकट्ठे करें तो भी उनकी इतनी अधिक संख्या न होगी। अलंकारो की अपेक्षा नायिका भेद की ओर कुछ अधिक सुझाव रहा। इससे श्रृंगार रस

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

के अन्तर्गत बहुत सुन्दर मुक्तक रचना हिन्दी में हुई और एक एक अंग को लेकर सरस ग्रंथ रचा गया। इस रस के भीतर दिखाया। रस ग्रंथ वास्तव में नायिका के ही ग्रंथ हैं। जिनमें और दूसरे रस पीछे से चलते कर दिये गये हैं। नायिका और श्रृंगार रस का आलम्बन है।

बिहारी रीतिग्रंथ लिखने वालों शास्त्र की गिनाई सामग्री की योजा करने में सवधान रहते थे। उन्हें लक्ष्य और लक्ष्य का समन्वय भी करना पड़ता था। पर सतसई, नौसई, हजारा लिखने वाले रीति की सामग्री का उपयोग अपने ढंग से करते थे यही कारण है कि इन्हें कहने के लिए कुछ स्वच्छंदता मिल गयी थी। इसी से सतसई आदि प्रस्तुत करने वालों की रचना रीतिग्रंथ लिखने वालों से प्रायः उत्कृष्ट दिखायी देती है। बंधन ढीला करके ये कविता में रमणीयता लाने में आवश्य सिद्धि हासिल की।

रीतिबद्ध कृति उन्हीं की नहीं थी जो लक्ष्य लिखकर और लक्ष्य बनाकर उसमें उसका विनियोग करते थे प्रत्युत्त उनकी कृति भी रीतिबद्ध ही थी। जो लक्ष्यमय न रचकर रीति का संभार केवल लक्ष्य प्रस्तुत करते थे, जैसे बिहारी, रसनिधि आदि। इन्होंने लक्षण क्यों नहीं लिखा, लक्ष्य ही क्यों प्रस्तुत किये। ये वस्तुतः लक्षण के बखेड़े में फॅसना नहीं चाहते कुछ चुने हुऐ प्रसंगों पर ही कविता रचना चाहते थे। ये रीति का बंधन ढीला करके चलते थे। तथापि ये उससे मुक्त नहीं हुये थे। इसी से लक्षणबद्ध रचना से इनकी कविता अपेक्षाकृत उत्कृष्ट है। लक्षण और लक्ष्य का समन्वय कवि में काव्योत्कर्ष को क्षति पहुॅचती थी। इसका पक्का प्रमाण भूषण की रचना से मिलता है, जिनकी फुटकल रचनाये उनके लक्षण ग्रंथ शिव भूषण की कविता से उत्तम है। लक्षणकार लक्षण से तिल भर हट नहीं सकता। वह रत्ती भर भी हटा कि लक्ष्य बेमेल हुआ लक्षण ग्रंथों में ऐसे बेमेल रचनायें भी कभी कभी मिल जाती हैं इसका कारण यही होता है कि कवि की वह लक्षणानुगामिनी निर्मित न होकर पहले से स्वीकृत उक्ति होती हैं। जिसे वह बरबस वहां खोसना चाहता है। रीति की केवल प्रेरणा ग्रहण करने वाले की कविता में ऐसा न होगा। रीति उसके ध्यान में रहे, रहा करे, पर उक्ति बांधने में उसे एकदम बंध ही न जाना पड़ेगा। बिहारी की रचना में रीति का आधार अवश्य है पर उक्ति का वैशिष्ट्य उन्हें कर्ताओं से पृथक कर इस आलम्बन के अंगों का वर्णन एक स्वतंत्र विषय बन गया और न जाने कितने ग्रंथ केवल नखशिख भेद वर्णन के लिए लिखे गये। इसीप्रकार उद्दीपन के रूप में षद्ऋतु वर्णन पर भी कई अलग पुस्तकें लिखी गयी। कुछ कवियों ने विप्रलय संबंधी बारहमासे आदि की रचे।

रीतिसिद्ध– जो कवि रीत के बंधन को ढीला करके तथा स्वच्छंद से कुछ पहले की सीमा को अपना करके काव्य रचना किया उन्हें रीतिसिद्ध कवि कहा गया। अर्थात जो कवि न तो पूर्णरूप से रीति के बंधनों से आबद्ध रहे और नहीं स्वच्छंद प्रवृत्ति से एकदम मुक्त बल्कि दोनों के बीच की कड़ी को अपना साध्य बनाया जिसमें बिहारी का सर्वप्रमुख स्थान है। डा0 विश्वनाथ मिश्र के अनुसार रीतिकाल में कुछ ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने रीतिशास्त्र पर कोई ग्रंथ नहीं लिखा। पर वे रीति के ही प्रतिनिधि कवि माने गये हैं क्योंकि उनपर रीति शास्त्र की भरपूर छाप है इनमें मुख्य बिहारी हैं। बिहारी मात्र एक ग्रंथ सतसई लिखा इसके अतिरिक्त और उनकी कोई रचना नहीं। यही सतसई उनकी कीर्ति का एकमात्र आधार हे और इसी के जरिये बिहारी ने पूरे रीतिकाल में एक अलग अपनी छवि बनाई। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार यही एक ग्रंथ उनकी इतनी बड़ी कीर्ति का आधार है यह बात साहित्य के क्षेत्र के इस तथ्य की घोषणा कर रही है कि किसी कवि का यश उसकी रचनाओं के परिमाप के हिसाब से नहीं होता गुण के हिसाब से होता है मुक्तक कविता में जो गुण होना चाहिए वह बिहारी के दोहे में अपने चरम उत्कर्ष को पहुॅचा है, इसमें कोई संदेह नहीं।

बिहारी आदि को रीतिबद्ध मानने का हेतु था बंधन बांधे रहना भले ही वह ढीला हो। उन्हें रीति की उपेक्षा अवश्य थी कभी उन्होंने नहीं की। बिहारी की सतसैया में खंडिता के उदाहरण अनेक हैं। अधिक ऐसे मिलेंगे जिनमें केवल आखों की ललई का वर्णन है। लक्षपानभावन करने वालों को संभोग की चिन्हों का लंबा चौड़ा वर्णन करना पड़ता है। बिहारी उक्ति वैचित्रय पर विशेष ध्यान देने वाले थे अतः उन्होंने खंडिता के लक्ष्य ने प्रमुख चिन्हों का तिरस्कार करके केवल ललाई पकड़ी और ऐसी उक्तियां बांध दी।

रहयौ चकित चहुँधा चितै, चित मेरो मति भूलि।
सूर उदे आए रहीं दृगनि सांझ सी फूलि।
सुरंग महावर सौति पग निरपि रही अनखाय।
पिय अगुरनि लाली लखै खरी उठी लगि लाय।

बिहारी ने यदि रीति के आधार को बावन तोला पावरत्ती ग्रहण करके अपने दोहों का निर्माण किया होता तो ऐसा कदापि न हो सकता कि संग्रहकर्ता उनका एक बोध खंडिता में रखे तो दूसरा धीराधीरादि में। अर्थात् उनके दोहे कभी किसी एक के द्वारा एक वर्ग में रखे गये हैं और किसी दूसरे के द्वारा किसी दूसरे वर्ग में।

जो कवि रीति से केवल सहारे के लिए काम लेते थे वे अपनी स्वतंत्र सत्ता थी चाहते थे वे अपनी स्वतंत्र सत्ता इसी से रीति की बंधन में काव्य प्रबंधन करने वालों में व्यक्तिगत विशेषता का स्फुटण बहुत कम हो सका। पर जो कवि रीति के आधार पर स्वतंत्र रचना करते थे उनमें ऐसी विशेषतायें बहुत कुछ साफ दिखायी देता है। बिहारी को दूसरे कवियों से अलग किया जाता है उसका यही काव्य है भले ही उनका रीतिकुल कवियों से मेल न हो पर शुद्ध रीतिबद्ध कवियों के बीच रखने पर अपनी विशेषता के कारण अलग चमकते रहे।

रीति सिद्ध कवि लक्षणग्रंथ लिखने वाले कवियों की भांति रीति की शास्त्र कवित नियमों का पूरा पालन नहीं करता। शास्त्र स्थिति संपादन मात्र इनका लक्ष्य नहं था कहीं तो चमत्कारितशय के लिए ये उक्तियां बधते थे और कहीं रसाभिव्यक्ति के लिए रीतिशास्त्रों में गिनाई हुई सामग्री की उपेक्षा करके अपने अनुभव और निरीक्षण से प्राप्य उपलब्धि सामग्री या नूतनता का संनिवेश करते थे।

रीतिमुक्त काव्यधारा

रीतिमुक्त काव्य लिखने में अनेक कारण हैं। इसमें पहला कारण यही है कि बहुत से कवि संस्कृत की शास्त्रीय परम्परा से बधकर कविता नहीं करना चाहते हैं उनके मन में अपनी कवि प्रतिभा को बटोरने के विरूद्ध एक विद्रोह भावना सी थी।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

ठीक उसी प्रकार की भावना योरप में क्लासिक या शास्त्रीय परम्परा के विरोध में पनपी और जिसके परिणामस्वरूप योरप का स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रकट हुआ। इसी प्रकार की भावना को लेकर अनेक कवि इस युग में आये जिन्होंने स्वच्छन्द रूप से काव्य की रचना की। प्रमुखतया ये प्रेम और श्रृंगार के कवि हैं इन कवियों के मन में जहां एक ओर शास्त्रीय काव्य परम्परा के प्रति विद्रोह था वहीं इनके अन्तर्मन में सामाजिक मर्यादाओं और रूढ़ियों के प्रति भी विद्रोह की भावना थी।

साहित्यिक दृष्टि से यह युग सम्पन्नता का युग था साहित्य केवल बंधी बधाई परिपाटियों में न बंधकर बहुमुखी प्रतिभा को प्राप्त कर चुका था। कवियों और साहित्यकारों में आबद्धता के प्रति आग्रह न होकर यथार्थ और सहज की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती थी। अतः युग में जहां एक ओर रीतिबद्ध काव्य लिखा गया वहीं बहुसंख्यक रचनायें विविध विषयों विधाओं तथा शैली को लेकर लिखी गयी जो रीतिमुक्त थी। उपयुक्त कारणों के अतिरिक्त रीतिमुक्त रचना का एक और कारण था। अनुभूति तत्व रीतिमुक्त कवि किसी न किसी स्त्री के प्रति प्रेम करते थे और उनके जीवन में विरह अवश्य था उसी को वे अनुभव के आधार पर व्यक्त कर देते इसलिए उनके काव्य में यथार्थ दिखायी देता। दूसरा कारण यह था कि समाज के प्रत्येक वर्ग और प्रत्येक स्तर के लोग साहित्य रचना के प्रति अनुराग रखते थे। जाहिर है कि कला का अनुराग जब इतना व्यापक रूप धारण है तो वह पूर्णतया बंधकर नहीं चल सकता इसलिए जहां एक ओर विदग्ध और आचार्य कवियों की परिपाटी थी वहीं दूसरी तरफ ऐसा काव्य का प्रणयन हुआ जो आबद्धता से रहित था। उस साहित्य को रीतिमुक्त साहित्य कहते हैं जो काव्यशास्त्रीय लक्षणों से बंधकर नहीं वरन् स्वतंत्र रूप से रचा गया है।

रीतिमुक्त कवि दनों ही प्रकार की रूढ़ियों को तोड़कर यहां तक ही धर्मगत् बंधनों की भी परवाह न करते हुए स्वच्छन्द प्रेम का मार्ग ग्रहण किया तथा प्रेम और श्रृंगार की मर्मस्पर्शनीय रचनायें प्रस्तुत कीं।

रीतियुग जिस परम्परा से ग्रसित था कुछ लोग उसमें पिसना नहीं चाते थे पर अनीति पराकाष्ठा को प्राप्त करे ही पतन की ओर अग्रसर होती है। ऐसा वातावरण आ जाता है कि युग बदलने लगता है उस स्थिति में कुछ लो बंधी बंधाई रूढ़ियों से बिल्कुल अलग रहने की साहस जुटा ही लेते हैं और अपना अस्तित्व स्वतंत्र रूप से स्थापित कर लेते हैं। फलस्वरूप प्रत्येक युग में ऐसे कवि होते हैं जो किसी परंपरा में नहीं बंधते बल्कि अपनी छवि अलग बनाये रखते हैं। सगुण और निर्गुण उपासना की विभिन्न प्रवृत्तियों के काव्य रीति परिपाटी से मुक्त काव्य थे। वास्तव में निर्गुणोपासक संत कवियों में से बहुत कम ऐसे थे जो काव्य शास्त्रीय ज्ञान से जानकार थे उन्होंने जो कुछ लिखा अपने अनुभव से लिखा स्वच्छंद श्रृंगारी कवियों की भांति ये संत कवि भी अपनी आध्यात्मिक विचारधारा तथा अपनी मान्यताओं में रूढ़ियों और परम्पराओं के विरूद्ध थे। इन कवियों ने जो काव्य प्रपीत किया वह एक प्रकार से रीतिमुक्त काव्य है, सगुणोपासक राम और कृष्ण काव्य यद्यपि अपनी वर्णन शैली और विषय परिपाटी से आबद्ध था फिर भी काव्यशास्त्रीय रीतियों से मुक्त था।

स्वच्छन्दतस जहां उच्छृंखलता का रूप धारण कर लेती है वहां पर विलासोन्मुख होने लगती है यों तो युग का प्रभाव स्वच्छंद व्यक्तियों पर भी पड़ता है परन्तु जो व्यक्ति युग आत्मा को अपनी ओर आकर्षित करते हैं वे महान हैं। चाहे राजा हो या कवि। यही कारण है कि सूर और तुलसीदास उस सम्मान को पा सके जिसे सम्राट अकबर भी न पा सका। "कुछ व्यक्तियों को इतिहास में लिखा जाता है और कुछ व्यक्तियों के लिए इतिहास लिखा जाता है। ऐसी आत्माएं महान होती है।" रीतिमुक्त कवि अनुठी भाव भंगिमा वाली उक्तियाँ बाधने वाले थे पर ह्रदय से संतृप्त जूठी उक्ति का पुर्नविधान या पिष्ठपेषण इन्हें अरूचिकर था। ऐस ही स्वच्छन्दतावादी कवि घनानन्द है उनके आत्मिक भावों का प्रकाशन उनके काव्य में है। जिस प्रकार शरीर में आत्मा की ज्योति पुंज होना अति आवश्यक है ठीक उसी प्रकार काव्य में कवि की अनुभूति तत्व या भावरूवंजना की रश्मि को विकीर्ण होना भी परमावश्यक है।

घनानन्द के इस छंद में रीतिमुक्त कवियों के काव्योत्कर्ष के स्वरूप का अच्छी तरह से पता चल जाता है–

"नेही महा ब्रजभाषा प्रवीन औ सुन्दरतानि के भेद को जानै।
जसेग वियोग की रीति मैं कोविद भावना भेद स्वरूप को ठानै।
चाह के रंग मैं भज्यौ हियौ, विछुरे मिले प्रितम सांतिन मानै।
भाषा प्रवीन सुदृढ़ सदा रहै, सो धन जी के कवित्त बखानै।

सुछंद शब्द का अर्थ–रीति से स्वच्छंद, रीतिमुक्त। रीतिबद्ध या शास्त्रबद्ध (क्लासिकल प्रवृत्ति के बंधन से छूँटकर ही ये रीतिमुक्त या स्वच्छंद (रोमांटिक)) होने वाले कवि थे। इनके विवरण के अनुसार ये प्रेम अनेक अंर्तवृत्तियों के उद्घटन का व्यगत रमपीयता के नाना भेदों के विधायक संयोग और वियोग की अनेक प्रेम दशाओं के मार्मिक दृष्टा, भावनाभेदों के सह्रदय चितेरे, प्रेमरस से सिक्त भावुक, मिलन और विरह की ह्रदयगत अशांति के अनुभावक और भाषा प्रयोग की सीमा के सच्चे ज्ञाता थे। ये वासना से पकील राजाओं के मानस का रंजन करने वाले चाटुकार नहीं थे। ये अपनी उभंग के आदेश पर थिरकरने वाले और काव्यविभूति द्वारा काव्यमर्मज्ञों को प्रभावित करने वाले थे। ये प्रेम के पथ पर अग्रसर होने वाले रचना में मोतिया की सी निर्मल वाग्धारा प्रवाहित करने वाले और उससे काव्यमाला गूथने वाले थे। मनमोहिनी और प्रभावुक।

स्वच्छंद काव्य भावाभिव्यक्ति होता है, बुद्धि बोधित नहीं, इसीलिए आंतरिकता उसका सर्वोपरिगुण है। आंतरिकता की रस प्रवृत्ति के कारण स्वच्छंद काव्य की सारी साधन सम्पत्ति शासित रहती है और यही वह दृष्टि है। जिसके द्वारा इन कर्ताओं की रचना के मूल उत्स तक पहुँचा जा सकता है।

वास्तव में प्रकृति के सरम्य रूपों को सूक्ष्म दृष्टि से देखकर उन पर मुग्ध होना एक बात है और नायक नायिकाओं की विहार स्थली को उद्दीपन को रूप में दिखाना दूसरी बात। उसी भांति अनेक नायक–नायिकाओं का विभेद दिखलाते हुए हाथों आदि को जोड़कर खड़ा कर देना मात्र कवि की सह्रदयता का वैसा पता नहीं लगा सकता जैसा तल्लीनता की अवस्था में प्रेम की मार्मिक उद्गारों

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

और स्त्री पुरूष के मधुर के रमणीय प्रसंगों का स्वाभाविक चित्रण करने में।

स्वच्छंद मार्गी कवियों में जो सबसे श्रेष्ठ है उनके विषय में डा0 श्याम सुन्दर ने लिखा है– रीति की परिपाटी के बाहर प्रेम संबंधी सुन्दर मुक्तक छंदो की रचना करने वालों में जिन तीन कवियों का प्रमुख स्थान है वे हैं घनानन्द ठाकुर वोधा। रीति के भीतर रहकर बंधे बंधाये विभाव, अनुंमाद संचारियों के संयोग से और परम्परा प्रचलित उपमानो की योजना से काव्य का ढांचा खड़ा करना कवि को विशेष उॅचा नहीं उठाता।

स्वच्छंद कवि ह्रदय की दौड़ के लिए राजमार्ग चाहते थे, रीति की सकरी गली में धक्कम धक्का करना नहीं। ये कविता की नयी तुली नाली खोदने वाले न थे। ये कविता का उत्स प्रवाहित करने वाले या मानस रस का उन्मुक्त दोन देने वाले थे। क्योंकि जहां प्रेम भावना मांसल सौन्दर्य से आन्तरिक सौंदर्य की ओर होती है वहां वह प्रेम विशुद्ध तथा उच्च कोटि की दुर्गंध से दूर होता है वहां वह मानस प्रेम का रूप ले लेता है।

इस प्रकार रीतिमुक्त का सीधा एवं सरल अर्थ है। रीतिबद्ध परंपरा के साहित्यिक बंधनों और रूढ़ियों से मुक्त। यह शब्द स्पष्टतः इस धारा की दूसरी समसामयिक काव्य प्रवृत्ति से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है यों तो रीतिमुक्तता की प्रवृत्ति साहित्य की सभी कालों के किसी न किसी रूप में विद्यमान है परन्तु रीतिकालीन श्रृंगारी कवियों के लिये यह शब्द रूढ़ हो गया था। कपोतो ढूॅढने वाले सूर एवं तुलसी में भी प्रगतिवादी एवं स्वच्दंदतावाद ढूॅढ निकालते हैं जबकि उस समय यह नाम भी नहीं था।

ये रीतिमुक्त श्रृंगारी कवि काव्यशास्त्रीय परंपरा से भली भांति परिचित थे और इसी रीति के विरोध में काव्य रचना करना इनकी मूल अवधारणा थी इसलिये ही रीति मुक्त कवियों ने काव्य शास्त्रीय परम्परा का उल्लंघन किया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. रीतिकालीन कवियों का काव्यशिल्प, डा0 महेन्द्र कुमार पेज–52.
2. हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास, डा0 नगेन्द्र, द्वितीय संस्करण।
3. हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग–2, डा0 विश्वनाथ मिश्र।
4. रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यंजना, डा0 बच्चन सिंह।
5. मतिराम ग्रंथावली, प्रकाशक, ना0प्र0स0 काशी।
6. घनानन्द ग्रंथावली, विश्वनाथ मिश्र।
7. आनन्दधन पद्मावली।
8. हिन्दी सा0र0, रामचन्द्र शुक्ल।
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डा0 रामचन्द्र शुक्ल।
10. हिन्दी साहित्य का अतीत श्रृंगारकला पद, भाग–2.

*****